खाद्य अधिनियम पर भारत का अधिकारः शब्दाडंबर से आगे
India's Right to Food Act: Beyond Rhetoric

रीतिका खेड़ा
Reetika Khera
June 7, 2010

2009 के आम चुनाव से पहले भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने वायदा किया था कि भारत के प्रत्येक गरीब परिवार को तीन रुपए प्रति किलोग्राम के हिसाब से हर महीने पच्चीस किलोग्राम खाद्यान्न दिया जाएगा. प्राप्त रिपोर्टों से संकेत मिल रहे हैं कि इस वायदे को पूरा करने के प्रयास जारी हैं. कांग्रेस की उत्सुकता के कारण आम लोगों की इस धारणा में खोजे जा सकते हैं कि कांग्रेस की चुनावी जीत में रा ष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी अधिनियम (नरेगा) की महत्वपूर्ण भूमिका रही है . कांग्रेस की उत्सुकता का दूसरा कारण उन राज्यों की चुनावी सफलता भी हो सकता है , जहाँ सस्ते खाद्यान्न की ऐसी व्यवस्था पहले से ही मौजूद है. इससे यह संकेत मिलता है कि इन नीतियों से "राजनीतिक पूँजी" भी बनाई जा सकती है.

निश्चय ही खाद्य अधिकार अधिनियम पर भारत के अधिकार के ठोस कारण मौजूद हैं. जहाँ तक सुरक्षा और पोषण के संकेतकों का सवाल है, भारत विश्व में सबसे नीचे के देशों में है. सबसे खराब बात तो यह है कि हाल के वर्षों में इनमें कोई सुधार भी नहीं हुआ है . उदाहरण के लिए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के आँकड़ों के अनुसार निर्धारित वजन से कम वजन वाले बच्चों का अनुपात 1998-99 और 2005-06 में वही रहा है.

कुछ कानूनी अनिवार्यताएँ भी हैं; भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 ("जीवन का बुनियादी अधिकार") के निर्वचन में खाद्यान्न का अधिकार भी शामिल है और निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 47 में राज्यों को उनके प्रमुख कर्तव्यों में पोषण के स्तर और लोगों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने के लिए भी निर्देश दिए गए हैं. और भारत ने इन मामलों पर कई अंतर्राष्ट्रीय संधि यों पर हस्ताक्षर भी किए हैं . सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि उच्चतम न्यायालय ने "खाद्यान्न के अधिकार" के मामले में पोषण संबंधी योजनाओं को लागू करने के लिए अनेक आदेश जारी किए हैं . चुनावी वायदों को पूरा करने के लिए व्यापक खाद्यान्न अधिकार अधिनियम लाने से पोषण और खाद्यान्न से संबंधित देश के निराशाजनक रिकॉर्ड को सुधारने का मौका मिल सकता है और इससे न्यायालय के आदेशों को कानूनी रूप भी दिया जा सकता है.

एक संभावित ढाँचा

खाद्यान्न अधिकार अधिनियम का स्वरूप क्या होगा ? खाद्यान्न का यह अधिकार सस्ते अनाज की व्यवस्था से भी आगे जाता है . यह अधिकार भूख और कुपोषण से मुक्ति का अधिकार है और यह खाद्यान्न की कमी के कारण होने वाले हर अभाव से भी मुक्ति दिलाएगा . इसके अंतर्गत न केवल पोषाहार की व्यवस्था होगी , बल्कि बच्चों की देखभाल , स्वच्छ पानी, आरोग्य और स्वास्थ्य संबंधी बुनियादी देखभाल की व्यवस्था आदि भी इसीके अंतर्गत होगी. दुर्भाग्यवश जो कानून लाया जा रहा है हमें उससे कहीं आगे जाना होगा और इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति और दृष्टि की भी आवश्यकता होगी और इसकी सचमुच बेहद कमी है.

खाद्यान्न अधिकार अधिनियम एक जटिल कानून होगा और इसका प्रभाव अलग-अलग ज़रूरतों वाली आबादी के बहुत बड़े वर्ग पर पड़ेगा . उदाहरण के लिए शिशुओं के खाद्यान्न के अधिकार के लिए

स्तनपान, माँ के स्वास्थ्य और सुरक्षित पेय जल की व्यवस्था सुनिश्चित करनी होगी . वयोवृद्ध, अशक्त और विधवाओं आदि कमज़ोर वर्गों के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अलावा पेन्शन की व्यवस्था भी करनी होगी. खाद्यान्न अधिकार अधिनियम के ढाँचे के मुख्यतः चार स्तंभ होंगेः बच्चों के लिए पोषाहार योजनाएँ, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, कमज़ोर वर्गों के लिए सामाजिक सहायता (जैसे पेन्शन) और अन्य योजनाएँ. इनका कार्यक्षेत्र केवल ग्रामीण क्षेत्र ही नहीं होगा , बल्कि शहरी क्षेत्रों (या कम से कम सबसे अधिक गरीब वर्गों) में भी इसे लागू किया जाएगा.

खाद्यान्न अधिकार अधिनियम पर बच्चों का पहला दावा होगा . पोषाहार पर किए गए शोध कार्यों से निर्विवाद रूप से यह स्पष्ट हो गया है कि 0-3 आयुवर्ग के बच्चों के लिए पोषाहार की सबसे अधिक आवश्यकता होती है. नए कानून के संदर्भ में तीन वर्ष से कम आयु के बच्चों की सेवाओं के लिए समन्वित बाल विकास सेवाओं को सुदृढ़ किया जाएगा . इसमें मातृ अधिकार (बच्चे के जन्म के लिए आमदनी सहायता सहित) बहुत महत्वपूर्ण होंगे और इस अधिनियम में इन्हें भी शामिल किया जाना चाहिए.

ग्रामीण क्षेत्रों के अत्यंत गरीब लोगों के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली खाद्यान्न के अधिकार को पाने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है. व्यापक सार्वजनिक वितरण प्रणाली खाद्यान्न अधिकार अधिनियम का मूल आधार होगी, लेकिन इसका दायरा ''विस्तृत'' होगा और इसमें गरीब और कमज़ोर वर्ग के लोगों के बेहतर पोषण के लिए सस्ती दालें और तेल जैसी चीज़ें भी शामिल होंगी.

शहरी क्षेत्रों में उन लोगों पर विशेष ध्यान देना होगा जो खाद्यान्न की दृष्टि से असुरक्षित हैं ; उन्हें सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत लाना होगा और ऐसे प्रवासियों, बेघरबार और असहाय लोगों के लिए जिन्हें सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत नहीं लाया जा सकता , सामुदायिक रसोई की सुविधा सुलभ करानी होगी. शहरी क्षेत्रों में उनकी तकलीफ़ें और भी बढ़ जाती हैं , क्योंकि शहर में न तो पड़ोसी मदद करते हैं, न जंगल से फल- फूल और लकड़ी लाई जा सकती है और न ही कोई और व्यवस्था की जा सकती है.

वयोवृद्ध, अशक्त तथा विधवाओं के लिए पेन्शन जैसी सुविधा बहुत आवश्यक है , क्योंकि कमज़ोर वर्ग के इन लोगों के पास नकदी जैसी कोई सुविधा नहीं होती. उपलब्ध साक्ष्यों से पता चलता है कि इन वर्गों के लिए मौजूदा पेन्शन योजनाओं के माध्यम से यदि थोड़ी- बहुत नकदी अंतरण की सुविधा भी इन्हें मिल जाती है तो अधिकांश लोगों के जीवन पर काफ़ी प्रभाव पड़ता है . अंततः आपात स्थितियों और विभाषिकाओं (जैसे बाढ़, भूकम्प और दंगे) से निपटने के लिए विशेष उपाय भी करने होंगे.

विवादग्रस्त मामलेः वित्तीय निहितार्थ और व्यापक सार्वजनिक वितरण प्रणाली

एक और महत्वपूर्ण मामला है लागत का , जिसकी व्यवस्था करनी होगी . यद्यपि यह कानून महँगा तो पड़ेगा, लेकिन यह संभव हो सकता है. खाद्यान्न अधिकार अधिनियम के बहुत-से प्रस्ताव (जैसे मध्याह्न भोजन योजना और समन्वित बाल विकास सेवाएँ) तो पहले से ही सरकारी योजनाओं के अंतर्गत कार्यान्वित हो चुके हैं. 2009-10 में केंद्र सरकार ने इन योजनाओं पर 642 बिलियन डॉलर खर्च किए हैं. खाद्यान्न अधिकार अधिनियम से निश्चय ही खाद्यान्न बिल का खर्च बढ़ेगा और यह इस बात पर भी निर्भर करेगा कि वर्तमान योजनाओं को किस सीमा तक बढ़ाया जाता है और उनमें कितना सुधार किया जाता है .

उदाहरण के लिए समन्वित बाल विकास सेवाओं की ''गुणवत्ता के सार्वभौमीकरण'' के लिए प्रतिवर्ष 300 बिलियन रुपए खर्च होंगे.

खाद्यान्न बिल पर भारी खर्च की दूसरी मद है व्यापक सार्वजनिक वितरण प्रणाली . इसकी लागत अनाज की तथाकथित ''आर्थिक लागत'' - भारतीय खाद्य निगम के ज़रिए वितरित खाद्यान्न की कुल लागत - और मात्रा से गुणा करने पर आने वाली इशू कीमत के बीच के अंतर से निका ली जा सकती है . इस आधार पर कुल लागत लगभग 820-1,150 बिलियन रुपए (क्रमशः पच्चीस से पैंतीस किलोग्राम के कोटे के लिए) होगी. इस विस्तृत गणना से बेहतर कवरेज और व्यापक अधिकारों के साथ जो लागत निकलती है वह वर्तमान खाद्यान्न बिल से लगभग दुगुनी हो सकती है.

सार्वजनिक वितरण प्रणालीः सार्वभौम लेकिन समान नहीं

सार्वभौमिक सार्वजनिक वितरण प्रणाली के प्रस्ताव से लागत और वर्तमान प्रणाली से जुड़े भ्रष्टाचार के मामलों को लेकर काफ़ी गर्मागर्म बहस हो सकती है . फिर भी कई कारणों से सार्वभौमिक सार्वजनिक वितरण प्रणाली का औचित्य है . ''खाद्यान्न का अधिकार'' सार्वभौमिक अधिकार ही होना चाहिए . इसके अलावा इसके लिए लक्ष्यनिर्धारण भी काफ़ी महँगा होगा . इसमें लाभग्राहियों को चिह्नित करना होगा और गलतियों का पता लगाना होगा . सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि लक्ष्यनिर्धारण की दृष्टि भी यह काफ़ी विभाजक है. नरेगा जैसे सार्वभौमिक कार्यक्रम गरीबों में एकता की भावना को मज़बूत करेंगे. अमर्त्य सेन कहते हैं, ''गरीबों के लिए लाभ कम लाभकारी होकर खत्म हो जाएँगे''.

एक विकल्प यह होगा कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली के सार्वभौमीकरण के कार्यक्रम की शुरूआत दो सौ सबसे गरीब ज़िलों से की जाए और उसके बाद समयबद्ध कार्यक्रम बनाकर इसे अन्य ज़िलों में लागू किया जाए. दूसरा विकल्प है कि कम अधिकारों के साथ इसका कवरेज सार्वभौमिक बनाया जाए. इस प्रणाली की ऐसी विविधता आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, केरल और तमिलनाडु जैसे राज्यों में प्रचलित योजनाओं में पहले से ही है. सार्वभौमीकरण संबंधी इस प्रकार की आवश्यकताओं के लिए प्रभावी शिकायत निवारण तंत्र होना बेहद ज़रूरी है. अपील के निपटारे के लिए कठोर दंड की व्यवस्था होनी चाहिए और समयबद्ध ढाँचा तैयार किया जाना चाहिए. बड़े पैमाने पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अनाज को कहीं और ले जाने से रोकने के लिए तमिलनाडु और छत्तीसगढ़ में जो उपाय किए गए उससे सीख ली जा सकती है.

राजनीतिक दृष्टि से मुख्य चुनौती यह है कि खाद्यान्न अधिकार अधिनियम को ''गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों को तीन रुपए प्रति किलोग्राम के हिसाब से पच्चीस किलोग्राम'' जैसे चुनावी वायदों की तरह क्षुद्र न बनाया जाए. खाद्यान्न अधिकार अधिनियम का अंतिम स्वरूप इस बात पर निर्भर करेगा कि सरकार क्या इससे मात्र ''राजनीतिक पूँजी'' जुटाना चाहेगी या फिर भारत की जनता के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह करना चाहेगी. सरकार के प्रारूप की उत्सुकता से प्रतीक्षा हो रही है, क्योंकि इसीसे यह स्पष्ट होगा कि *''आम आदमी''* (आम आदमी, महिलाएँ और बच्चे भी) के प्रति सरकार की वचनबद्धता शब्दाडंबर तक सीमित है या उससे आगे भी है.

रीतिका खेड़ा भारतीय सांख्यिकी संस्थान,दिल्ली से संबद्ध हैं. यह लेख इकॉनॉमिक ऐंड पॉलिटिकल वीकली में प्रकाशित उनके अधिक विस्तृत लेख से लेकर संक्षिप्त किया गया है

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा),रेल मंत्रालय, भारत सरकार

<malhotravk@hotmail.com>